



प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
दाण्डिक अपील क्रमांक 1229/2024

महेश कुमार वर्मा पिता स्व. पन्नालाल वर्मा, आयु लगभग 25 वर्ष, निवासी- ग्राम चंदना, पुलिस चौकी
करेलीबाड़ी, थाना मगरलोड, जिला- धमतरी, छत्तीसगढ़

अपीलार्थी

विरुद्ध

छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा: थाना मगरलोड, जिला- धमतरी, छत्तीसगढ़

प्रत्यर्थी

(वाद-शीर्षक वाद सूचना प्रणाली से लिया गया है)

अपीलार्थी की ओर से

: श्री अभिषेक सिन्हा, वरिष्ठ अधिवक्ता सहित सुश्री अदिति सिंघवी
एवं श्री शास्वत येचुरी, अधिवक्तागण

प्रत्यर्थी की ओर से

: श्री शशांक ठाकुर, उप-महाधिवक्ता

माननीय श्री रमेश सिन्हा, मुख्य न्यायाधिपतिमाननीय श्री बिभु दत्त गुरु, न्यायाधीशबोर्ड पर निर्णयद्वारा, बिभु दत्त गुरु, न्यायाधीश31/07/2025

सुना।

1. यह दाण्डिक अपील दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अधीन, विद्वान सत्र न्यायाधीश, धमतरी, जिला धमतरी (छत्तीसगढ़) द्वारा सत्र प्रकरण क्रमांक 37/2021 में दिनांक 15/02/2024 को पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के आक्षेपित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसमें अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 (दो बार) और 323 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है तथा उसे आजीवन कारावास एवं 100/- रुपये का अर्थदण्ड (दो बार), अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम की



दशा में उसे क्रमशः 3 माह का सश्रम कारावास और 1 माह का अतिरिक्त कारावास का दण्ड भुगतना होगा, से दण्डित किया गया है।

2. प्रकरण के तथ्य संक्षिप्त में यह हैं कि शिकायतकर्ता श्रीमती रेखा वर्मा (अ.सा.-2), अपीलार्थी/अभियुक्त की माँ, ने दिनांक 14.4.2021 को पुलिस चौकी करेली बड़ी में रिपोर्ट दर्ज कराई कि दिनांक 13.4.2021 को रात लगभग 9:00 बजे, जब वह और उसका परिवार खाना खाकर सोने चले गए, तो उनका पुत्र यानी अपीलार्थी अपने कमरे में सो रहा था और चूँकि उसकी मानसिक स्थिति ठीक नहीं है, इसलिए उसका कमरा बाहर से बंद था। रात लगभग 11 बजे अपीलार्थी ने उसे बुलाया और कहा कि वह पानी पीना चाहता है, यद्यपि डर के मारे उसने दरवाजा नहीं खोला और अपने पति यानी मृतक पन्नालाल वर्मा को बुलाया। जिन्होंने बाद में दरवाजा खोला, जिसके बाद अपीलार्थी बाहर आया। जब शिकायतकर्ता ने उससे पूछा कि वह हंगामा क्यों कर रहा है, तो उसने कहा कि "मैं हनुमान जी, बजरंग बली, दुर्गा हूँ" और फिर शिकायतकर्ता को धक्का दे दिया। इसके बाद अपीलार्थी ने अपने पिता और दादी (दोनों दिवंगत) के साथ झगड़ा शुरू कर दिया, जिस पर शिकायतकर्ता अपने पड़ोसियों को बुलाने गई, लेकिन जब वह वापस आई तो घर का दरवाजा अंदर से बंद था। दरवाजा खोलने पर पता चला कि पन्नालाल वर्मा (अब डी1) और त्रिवेणी वर्मा (अब डी2) (क्रमशः शिकायतकर्ता के पति और सास) दोनों रक्त से लथपथ मृत पड़े थे।

3. उपरोक्त रिपोर्ट के आधार पर, देहाती नालशी (प्रदर्श पी/3) पंजीबद्ध किया गया और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं 323 के अंतर्गत अपराध क्रमांक 104/2021 पंजीबद्ध किया गया। प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्रदर्श पी 32) पंजीबद्ध कर ली गई है। विवेचना की औपचारिकताएँ पूर्ण करने के उपरांत, संबंधित न्यायालय में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 एवं 323 के अंतर्गत आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। उसे आरोप पढ़कर सुनाए गए, जिसे उसने अस्वीकार किया और विचारण चाहा।

4. अपना प्रकरण साबित करने के लिए, अभियोजन ने 15 साक्षियों का परीक्षण कराया। अपीलार्थी का कथन दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया, जिसमें उसने प्रकरण में स्वयं को निर्दोष बताया और झूठे आरोप में फँसाए जाने का अभिवाक किया।

5. विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्यों का समुचित विवेचना करने के उपरांत अपीलार्थी को इस निर्णय के कण्डिका एक में उल्लिखित अनुसार सिद्धदोष एवं दण्डित किया। अतः यह अपील प्रस्तुत की गई है।



6. (क) अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अभिषेक सिन्हा का तर्क है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पारित करते समय यह विवेचना करने में असफल रहा है कि अभियोजन ने अपना प्रकरण युक्तियुक्त संदेहों से परे साबित नहीं किया है। वास्तव में, अपीलार्थी घटना के समय पागलपन से ग्रसित था, इस प्रकार, अभियोजन द्वारा घटना के समय अपीलार्थी की मानसिक स्थिति की परीक्षण न कराना अभियोजन के प्रकरण में एक गंभीर दोष उत्पन्न करता है और संदेह का लाभ अपीलार्थी को दिया जाना चाहिए। उन्होंने तर्क किया कि अ.सा. क्रमांक 14 दक्ष कुमार साहू के कथन के अनुसार, मार्ग सूचना दर्ज करते समय, यह सूचित किया गया था कि अपीलार्थी एक विकृत चित्त व्यक्ति है, तथापि, विवेचना अधिकारी, संतोष साहू (अ.सा. क्रमांक 15) ने अभी भी अपीलार्थी की मानसिक रुग्णता के तथ्य की विवेचना नहीं की।

(ख) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी तर्क किया कि भूपेंद्र कुमार वर्मा (अ.सा.-1), रेखा बाई (अ.सा.-2), बिसहत राम (अ.सा.-3), ललित वर्मा (अ.सा.-4), दारेंद्र साहू (अ.सा.-5), नरेंद्र सागरवंशी (अ.सा.-11), प्रमिला साहू (अ.सा.-12) के साक्ष्यों में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि अपीलार्थी को कोविड-19 महामारी के दौरान छत से गिरने के बाद सिर में चोटें आई थीं और वह रायपुर में मानसिक उपचार ले रहा था। अ.सा.-1 भूपेंद्र कुमार वर्मा (आरोपी का चचेरा भाई) और अ.सा.-2, रेखा बाई, जो अपीलार्थी की माँ हैं, ने बहुत स्पष्ट रूप से कथन किया है कि अपीलार्थी का रायपुर में डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला के अधीन उपचार चल रहा था। इस प्रकार, अपीलार्थी दोषसिद्धि, घटना के समय उसकी मानसिक स्थिति का पता लगाए बिना, **बापू @ गुजराज सिंह विरुद्ध राजस्थान राज्य, (2007) 8 एससीसी 66 के प्रकरण में और दशरथ पात्रा विरुद्ध छत्तीसगढ़ राज्य (दाण्डिक अपील क्रमांक 821/2025, दिनांक 08/05/2025 को पारित निर्णय) में**, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सुस्थापित सिद्धांत का स्पष्ट रूप से उल्लंघन करता है।

(ग) विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय 25 का प्रावधान इस बात की जाँच करने की प्रक्रिया से संबंधित है कि क्या अभियुक्त विकृतचित्त होने के कारण अपना प्रतिरक्षा करने में असमर्थ है या नहीं। यद्यपि, विचारण न्यायालय केवल दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 328 के अधीन जाँच के दौरान प्राप्त चिकित्सा रिपोर्ट का अवलंब लेते हुए पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि अपीलार्थी घटना के समय पागल नहीं था।

(घ) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, अपीलार्थी-अभियुक्त घटना के समय भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 84 के अंतर्गत एक विकृत चित्त व्यक्ति था। किसी व्यक्ति के पागलपन के तथ्य, जिसने



उसे अपने कृत्य की प्रकृति जानने से रोका, को उसके भूत, वर्तमान और भविष्य के आचरण के आधार पर विचार किया जाना चाहिए।

7. दूसरी ओर, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान उप-महाधिवक्ता श्री शशांक ठाकुर ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया और यह तर्क दिया कि अपीलार्थी-अभियुक्त के चिकित्सा अभिलेख और अभिलेख में प्रस्तुत अन्य साक्ष्यों के सावधानीपूर्वक परीक्षण के उपरांत, इस उपयुक्त निष्कर्ष पर पहुँचे कि अपीलार्थी-अभियुक्त का प्रकरण भारतीय दंड संहिता की धारा 84 द्वारा बनाए गए अपवाद के अंतर्गत नहीं आता। उन्होंने स्पष्ट रूप से यह तर्क किया कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त के परीक्षण के दौरान, झूठे आरोप के अतिरिक्त, घटना की तारीख को उसकी विकृतचित्ता के संबंध में विशेष रूप से कुछ भी नहीं कहा गया है।

8. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना एवं उनके उपरोक्त प्रस्तुत परस्पर विरोध तर्कों पर विचार किया तथा अभिलेखों का भी अत्यंत सावधानीपूर्वक परिशीलन किया।

9. अ.सा.11- शारदा ठाकुर एक चिकित्सा अधिकारी हैं, जिन्होंने मृतक व्यक्तियों का शवपरीक्षण किया था। इस साक्षी के अनुसार, डी2 का शवपरीक्षण करते समय, उन्होंने निम्नानुसार पाया:-

बाह्य परीक्षण- शव मृत अवस्था में लाया गया था, हाथों और पैरों में अकड़न थी, दोनों आँखें बंद थीं, मुँह भी बंद था, दाहिनी ओर मैक्सिलरी और ललाट की हड्डी में एक दबा हुआ फ्रैक्चर था। बाईं आँख के मध्य भाग में 1.5x0.5x1.0 सेमी का गहरा घाव था। मुँह और नाक से रक्त बह रहा था।

आंतरिक परीक्षण- फेफड़े, यकृत, तिल्ली, गुर्दे, हृदय और मस्तिष्क हल्के संकुचित थे। पेट की थैली- पीली थी और उसमें पचा हुआ भोजन था। छोटी आंत पीली थी और उसमें पचा हुआ भोजन था। बड़ी आंत पीली थी और उसमें मल था। हृदय में हल्का संकुचन था। हृदय के दोनों कक्ष खाली थे।

अभिमत- मृतका त्रिवेणी की मृत्यु सिर में गंभीर चोट और अत्यधिक रक्तस्राव के कारण हृदय और श्वसन तंत्र के रुक जाने से हुए सदमे से हुई। मृत्यु की प्रकृति मानववध की थी।

इसके अतिरिक्त, डी1 का शवपरीक्षण करते समय, यह पाया गया कि:-



बाह्य परीक्षण- शव मृत अवस्था में लाया गया था। दोनों हाथों और पैरों में अकड़न थी, दोनों आँखें बंद थीं, मुँह बंद था, बाईं ओर पार्श्विका क्षेत्र के मध्य भाग में एक गहरा घाव था, जिसका आकार 5.0x1.5x1.0 सेमी था। बाएँ कंधे के जोड़ में 2.0x1.0 सेमी माप का रक्त का थक्का जैसा द्रव्यमान था। पूरा शरीर पीला पड़ गया था। नाक और मुँह से रक्त बह रहा था।

आंतरिक परीक्षण- फेफड़े, यकृत, तिल्ली, गुर्दे, हृदय और मस्तिष्क हल्के संकुचित थे। पेट की थैली पीली थी और उसमें पचा हुआ भोजन था। छोटी आंत पीली थी और उसमें पचा हुआ भोजन था। बड़ी आंत पीली थी और उसमें मल था। हृदय में हल्का संकुचन था। हृदय के दोनों कक्ष खाली थे।

अभिमत- मृतक पन्नालाल की मृत्यु सिर में गंभीर चोट और अत्यधिक रक्तस्राव के कारण हृदय और श्वसन तंत्र के रुक जाने से हुए सदमे से हुई। मृत्यु की प्रकृति मानववध थी।

10. यह स्वीकृत है कि अपीलार्थी, डी1 का पुत्र और डी2 का पोता है और शिकायतकर्ता उसकी माँ है। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि अपीलार्थी ने मृतक व्यक्ति की हत्या कारित की थी, अतः मृतक व्यक्तियों की मृत्यु की प्रकृति मानववध पाई गई। यद्यपि, यह न्यायालय, डॉ. शारदा ठाकुर (अ.सा.11) के साक्ष्य पर विवेचना करने के उपरांत, इस निष्कर्ष की पुष्टि करता है कि मृत्यु की प्रकृति मानववध थी।

11. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के अधीन पागलपन का तर्क अपीलार्थी द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया है, जो कि आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से स्पष्ट है, यद्यपि, इसे विद्वान विचारण न्यायालय ने खारिज कर दिया है और अपीलार्थी को उपरोक्त धाराओं के अधीन दोषसिद्ध किया है।

12. इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी घटना के समय पागल/विकृतचित्त था, यदि हाँ, तो अपीलार्थी की दोषसिद्धि न्यायोचित है या नहीं? और क्या अपीलार्थी, घटना के समय, विकृतचित्त अवस्था में था और इस प्रकार भारतीय न्याय संहिता, 2023 (भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के समकक्ष) की धारा 22 के अंतर्गत लाभ का हकदार था?

13. भारतीय न्याय संहिता (भारतीय नागरिक संहिता), 2023 की धारा 22 निम्नानुसार है:-



विकृतचित्त व्यक्ति का कार्य- कोई बात अपराध नहीं है, जो उसे करते समय चित्ताविकृति के कारण उस कार्य की प्रकृति, या यह कि जो कुछ वह कर रहा है वह दोषपूर्ण या विधि के प्रतिकूल है, जानने में असमर्थ है।

पागलपन का विवादक:

14. वर्तमान प्रकरण में, पहला साक्ष्य मर्ग सूचना (प्रदर्श पी 4 और 5) है, जो शिकायतकर्ता/अपीलार्थी की माँ द्वारा दर्ज कराई गई है। उक्त मर्ग सूचना में, यह आरोप लगाया गया है कि उसका छोटा पुत्र (अपीलार्थी) कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण लॉकडाउन की अवधि के दौरान छत से गिर गया था और उसके सिर पर चोट लग गई थी और इस चोट के कारण उसकी मानसिक अवस्था पिछले एक वर्ष से ठीक नहीं थी और उसका उपचार रायपुर के मानसिक रुग्णालय में चल रहा था। वह एक मानसिक रोगी था। यह बयान दिया गया कि दिनांक 13/04/2021 को रात लगभग 9:00 बजे, भोजन करने के उपरांत, वे सोने चले गए। अपीलार्थी कमरे के अंदर सो रहा था और दरवाजा बाहर से बंद था, क्योंकि उसकी मानसिक अवस्था ठीक नहीं थी। रात लगभग 11:00 बजे, अपीलार्थी ने उसे बुलाया और पीने का पानी माँगा और उसे दरवाजा खोलने के लिए कहा, लेकिन डर के कारण उसने तुरंत दरवाजा नहीं खोला और डी1 को बुलाया। इसके बाद, डी1 ने दरवाजा खोला। जब शिकायतकर्ता ने उससे पूछा कि वह हल्ला क्यों कर रहा है, तो उसने कहा कि "मैं हनुमानजी, बजरंग बली, दुर्गा हूँ" और फिर उसे धक्का दे दिया। इसके बाद, अपीलार्थी, डी1 और डी2 से झगड़ने लगा और फिर वह उन्हें बुलाने के लिए पड़ोसी के पास गई। जब वह वापस लौटी, तो दरवाजा अंदर से बंद था और उन्होंने अंदर जाकर देखा कि डी1 और डी2 रक्त से लथपथ पड़े थे। मर्ग सूचना में आरोप लगाया गया था कि अपीलार्थी, जो मानसिक रूप से बीमार था, ने मृतक व्यक्तियों की हत्या कारित की थी।

15. अ.सा.1- भूपेंद्र कुमार वर्मा, जो अपीलार्थी का चचेरा भाई है, ने अपने बयान में स्पष्ट रूप से कथन किया है कि घटना की तारीख को, शिकायतकर्ता लगभग 12:00 बजे उसके घर आयी और बताया कि अपीलार्थी उनसे झगड़ा कर रहा है और इसके बाद, दोनों उसके घर गए। दरवाजा बाहर और अंदर से बंद था। दरवाजे पर एक ताला लगा हुआ था और दरवाजे के छेद से झाँकने पर, शिकायतकर्ता ने देखा कि डी1 फर्श पर पड़ा था। इसके बाद, उन्होंने पास के पड़ोसी को जगाया और बाद में, जब पुलिस आई, तो दरवाजे खोले गए जहाँ उन्होंने देखा कि डी1 और डी2 रक्त से लथपथ मृत पड़े थे।



16. अ.सा.2- शिकायतकर्ता- रेखा बाई अपीलार्थी की माँ और डी1 की पत्नी तथा डी2 की बहू हैं। उन्होंने बताया कि उनके परिवार में चार सदस्य हैं। घटना के दिन ही, अपीलार्थी का उपचार कराने के बाद, डी1 उसे घर वापस ले आई थी। अचानक, रात में, अपीलार्थी "मैं हनुमानजी, बजरंग बली, दुर्गा हूँ" का जाप कर रहा था और उसने उसके कपड़े भी छीन लिए। अपीलार्थी झगड़ने लगा, तो वह घर से बाहर भागी और बाहर से दरवाजा बंद कर लिया। जब वह अपने पड़ोसियों के साथ घर लौटी, तो दरवाजे अंदर से बंद थे और दरवाजे के एक छेद से उन्होंने देखा कि डी1 रक्त से लथपथ फर्श पर पड़ी थी।

प्रतिपरीक्षण में, इस साक्षी ने स्वीकार किया है कि घटना से 1-2 वर्ष पूर्व, अपीलार्थी छत से गिर गया था और उसके सिर पर चोट लगी थी। उसने स्वीकार किया कि उक्त चोट के कारण, अपीलार्थी की मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी और उसका उपचार रायपुर के अस्पताल में चल रहा था। उसने स्पष्ट रूप से कथन किया कि अपीलार्थी लगभग डेढ़ वर्ष से डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला से दवा ले रहा था।

17. अ.सा. 3- बिशत राम वर्मा ने अ.सा. 1 की तरह ही कथन किया है कि घटना की तिथि को, शिकायतकर्ता (अ.सा. 2) आई और उपरोक्त घटना के बारे में बताया, जिसके बाद वे उसके घर गए और देखा कि डी1 और डी2 रक्त से लथपथ पड़े थे। इस साक्षी को, यद्यपि पक्षद्रोही घोषित किया गया है, किंतु प्रतिपरीक्षण में, इस साक्षी ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि कोविड-19 महामारी के प्रकोप के कारण लॉकडाउन की अवधि के दौरान अपीलार्थी को छत से गिरने के बाद चोट लगी थी। इसी प्रकार, अ.सा. 4- ललिता वर्मा, जो अपीलार्थी की चचेरी बहन है, ने कथन किया है कि लगभग 12:38 बजे, उसे ज्ञात हुआ कि अपीलार्थी ने मृतक व्यक्तियों की हत्या कारित की है। अभियोजन द्वारा उसे भी पक्षद्रोही घोषित किया गया है।

18. अभियुक्त 15- संतोष साहू (विवेचना अधिकारी) ने अपने प्रतिपरीक्षण में स्वीकार किया कि विवेचना के दौरान, उन्होंने अभियुक्त के मानसिक उपचार से संबंधित कोई भी दस्तावेज उसके परिवार के सदस्यों से ज़ब्त नहीं किया। यहाँ तक कि, उन्होंने डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला से भी कोई जाँच रिपोर्ट प्राप्त नहीं की जिससे इस तथ्य को साबित किया जा सके कि अभियुक्त घटना के दिन मानसिक रूप से स्थिर था या नहीं।

19. साक्षियों के कथनों पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि शिकायतकर्ता (अ.सा.2) ने अपनी मर्ग सूचना (प्रदर्श पी4/पी5) और न्यायालयीन अभिसाक्ष्य, दोनों में स्पष्ट रूप से कथन किया है कि



अपीलार्थी को कोविड-19 लॉकडाउन के दौरान छत से गिरने के बाद सिर में चोटें आई थीं और वह रायपुर में डॉ. प्रकाश नारायण शुक्ला के अधीन डेढ़ वर्ष से अधिक समय से मनोरोग उपचाराधीन था। इसके अतिरिक्त, अ.सा.1, अ.सा.3 व अन्य साक्षीगण अपीलार्थी की मानसिक रुग्णता और चल रही उपचार के तथ्य की पूरी तरह से पुष्टि करते हैं। घटना की तारीख को भी, अपीलार्थी को चिकित्सक से उपचार कराने के बाद घर वापस लाया गया और उसे एक कमरे में बंद रखा गया। विवेचना अधिकारी (अ.सा.15) ने यह भी स्वीकार किया है कि उसके द्वारा उपचार करने वाले चिकित्सक/अस्पताल से चिकित्सा अभिलेख या प्रमाण पत्र सत्यापित करने या एकत्र करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया था, न ही घटना के समय अपीलार्थी की मानसिक स्थिति का आकलन करने के लिए कोई चिकित्सा बोर्ड गठित किया गया था। अपीलार्थी को हिंसक या अप्रत्याशित व्यवहार के भय से एक कमरे में बंद रखा गया था, जो घर में मानसिक विकार के पहचानने योग्य लक्षणों का संकेत देता है।

20. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **बापू विरुद्ध राजस्थान राज्य, (2007) 8 एससीसी 66** में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

“8. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के अधीन, किसी व्यक्ति को विकृतचित्त होने के कारण किसी कार्य को करने के दायित्व से मुक्त किया जाता है यदि वह कार्य करते समय या तो (क) कार्य की प्रकृति को, या (ख) कि वह जो कर रहा है वह दोषपूर्ण है या विधि के प्रतिकूल है, को जानने में असमर्थ है। अभियुक्त को न केवल तब संरक्षण प्राप्त होता है जब पागलपन के कारण वह कार्य की प्रकृति को जानने में असमर्थ था, बल्कि तब भी जब उसे यह ज्ञात नहीं था कि कार्य दोषपूर्ण था या यह विधि के प्रतिकूल था, यद्यपि उसे स्वयं कार्य की प्रकृति का पता हो। यद्यपि, उसे संरक्षण प्राप्त नहीं है यदि उसे पता था कि वह जो कर रहा था वह दोषपूर्ण था, भले ही उसे यह पता न हो कि यह विधि के प्रतिकूल है, और तब भी जब उसे पता था कि वह जो कर रहा था वह विधि के प्रतिकूल है यद्यपि उसे यह पता न हो कि यह दोषपूर्ण है। विकृतचित्त साबित करने का दायित्व अभियुक्त पर है। किंतु जहाँ विवेचना के दौरान पागलपन का पिछला इतिहास प्रकट होता है, वहाँ एक निष्ठावान विवेचक का यह कर्तव्य है कि वह अभियुक्त का चिकित्सा परीक्षण कराए और उस साक्ष्य को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करे और यदि ऐसा नहीं किया जाता है, तो इससे अभियोजन के प्रकरण में गंभीर दोष उत्पन्न होता है और संदेह का लाभ अभियुक्त को दिया जाना चाहिए। यद्यपि, इस दायित्व का निर्वहन अभियुक्त के अपराध से कुछ समय पूर्व के आचरण और उस समय या तुरंत बाद के आचरण के बारे में साक्ष्य प्रस्तुत करके, साथ ही उसकी मानसिक अवस्था व अन्य सुसंगत कारकों के साक्ष्य



प्रस्तुत करके किया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति से यह माना जाता है कि वह अपने कृत्य के स्वाभाविक परिणामों को जानता है। इसी प्रकार, प्रत्येक व्यक्ति से यह भी माना जाता है कि वह विधि को जानता है। अभियोजन को इन तथ्यों को स्थापित नहीं करना है।

21. **दह्याभाई छगनभाई ठकर विरुद्ध गुजरात राज्य, एआईआर 1964 एससीसी 1563** के प्रकरण में, न्यायालय ने कण्डिका 7 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

“7. पागलपन के अभिवचन के संदर्भ में साक्ष्य के भार के सिद्धांत को निम्नलिखित सिद्धांतों में व्यक्त किया जा सकता है: (1) अभियोजन को युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित करना होगा कि अभियुक्त ने अपराध अपेक्षित दुराशय से कारित किया था, और विचारण के प्रारंभ से अंत तक यह साबित करने का भार सदैव अभियोजन पर होता है। (2) एक खंडनीय अनुमान है कि अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 84 द्वारा विहित अर्थ में, अपराध कारित करते समय पागल नहीं था: अभियुक्त न्यायालय के समक्ष सभी सुसंगत साक्ष्य- मौखिक, दस्तावेजी या परिस्थितिजन्य - प्रस्तुत करके इसका खंडन कर सकता है, लेकिन उस पर साक्ष्य का भार सिविल कार्यवाही में किसी पक्षकार या उसके ऊपर होने वाले भार से अधिक नहीं है। (3) भले ही अभियुक्त निर्णायक रूप से यह साबित करने में सक्षम न हो कि अपराध करते समय वह पागल था, अभियोजन द्वारा अभियुक्त द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य न्यायालय के मन में अपराध के एक या अधिक घटकों के संबंध में, जिसमें अभियुक्त की मनःस्थिति भी शामिल है, एक युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न हो सकता है और उस स्थिति में न्यायालय इस आधार पर अभियुक्त को बरी करने का हकदार होगा कि अभियोजन पर साक्ष्य का सामान्य भार नहीं डाला गया था।

22. **रूपेश मैनेजर (थापा) विरुद्ध सिक्किम राज्य, (2023) 9 एससीसी 739** के प्रकरण में, न्यायालय ने दोहराया कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के अधीन बचाव को साबित करने के लिए साक्ष्य का मानक केवल एक युक्तियुक्त संदेह है। यह भी सुस्थापित है कि विधिक पागलपन और चिकित्सीय पागलपन के मध्य अंतर किया जाना चाहिए और चिकित्सीय पागलपन साबित करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है। माननीय उच्चतम न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधीशों की एक अन्य पीठ ने **सुरेंद्र मिश्रा विरुद्ध झारखंड राज्य, (2011) 11 एससीसी 495** के प्रकरण में कण्डिका 11 से 13 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

“11. हमारे अभिमत में, जो अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 84 के अधीन किसी कार्य के दायित्व से मुक्ति चाहता है, उसे विधिक पागलपन साबित करना होगा न कि



चिकित्सीय पागलपन। "विकृतचित्त" शब्द को भारतीय दंड संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है और इसे मुख्यतः पागलपन के समतुल्य माना गया है। लेकिन पागलपन शब्द का अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग अर्थ होता है और यह मानसिक विकार की अलग-अलग अवस्था का वर्णन करता है। हर व्यक्ति जो मानसिक रोग से पीड़ित है, वह स्वतः दायित्व से मुक्त नहीं है। केवल यह तथ्य कि अभियुक्त अभिमानी, विचित्र, चिड़चिड़ा है और उसका मस्तिष्क ठीक नहीं है, या जिन शारीरिक और मानसिक बीमारियों से वह पीड़ित है, उसने उसकी बुद्धि को दुर्बल कर दिया है और उसकी भावनाओं को प्रभावित किया है या वह कुछ असामान्य कार्यों में लिप्त है, या उसे थोड़े-थोड़े अंतराल पर पागलपन के दौरों पड़ते हैं या उसे असामान्य मिर्गी के दौरों पड़ते हैं और उसका व्यवहार असामान्य है या क्या अजीब बातें भारतीय दंड संहिता की धारा 84 के अधीन लागू होने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।

12. अगला प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि विकृतचित्त साबित करने का दायित्व किस पर है।

13. विधि में, यह धारणा है कि प्रत्येक व्यक्ति इस सीमा तक स्वस्थ है कि वह अपने कार्य के प्राकृतिक परिणामों को जानता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के अनुसार, साक्ष्य साबित करने का भार अभियुक्त पर है। यद्यपि यह भार अभियुक्त पर है, किंतु उसे इसे युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि केवल संभावनाओं की प्रबलता का समाधान करना है। इस दायित्व का निर्वहन अभियुक्त के अपराध से पूर्व के आचरण, उस समय या अपराध के तुरंत बाद के आचरण, उसकी चिकित्सा स्थिति के संदर्भ में, चिकित्सा साक्ष्य और अन्य सुसंगत कारकों को प्रस्तुत करके किया जाना चाहिए। भले ही अभियुक्त विकृतचित्त साबित हो जाए, भारतीय दंड संहिता की धारा 84 उसका संरक्षण नहीं करेगी यदि यह पाया जाता है कि अभियुक्त जानता था कि वह जो कर रहा था वह दोषपूर्ण था या यह विधि के प्रतिकूल था। यह सुनिश्चित करने के लिए, बाध्यकारी परिस्थितियों और अपराध से पूर्ववर्ती, मौजूदा एवं अनुवर्ती व्यवहार को विचार में रखना होगा। किसी अभियुक्त का व्यवहार अपराध के हथियार को छिपाने की इच्छा और अपराध का पता चलने से बचने के लिए किया गया आचरण यह ज्ञात करने में अत्यंत सहायक होता है कि क्या उसे अपने द्वारा किए गए कार्य के परिणामों की जानकारी थी।"



23. इसी प्रकार, दशरथ पात्रा विरुद्ध छत्तीसगढ़ राज्य, दाण्डिक अपील क्रमांक 821/2025 (दिनांक 08/05/2025 को निर्णीत) प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने पैरा 10, 11 और 12 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

“10. हमें यह उल्लेख कर आश्चर्य हुआ कि साक्ष्य दर्ज होने के उपरांत, अभियोजन ने अपीलार्थी की चिकित्सकीय परीक्षण की अनुमति हेतु विचारण न्यायालय का रुख नहीं किया। विधि यह प्रतिपादित करता है कि किसी विक्षिप्त द्वारा किया गया कोई भी कार्य अपराध नहीं है। इसका कारण यह है कि विक्षिप्त अपनी प्रतिरक्षा करने की स्थिति में नहीं होता। किसी अपराध के आरोप की प्रतिरक्षा करने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन एक मूल अधिकार है।

11. अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी का किया गया चिकित्सकीय परीक्षण निरर्थक है। इसका कारण यह है कि यह घटना के 5 वर्ष से अधिक समय के पश्चात किया गया था।

12. ऊपरोक्त उद्धृत साक्षियों के बयानों को दृष्टिगत रखते हुए, हमारा विचार है कि यह प्रकरण अपीलार्थी के पागलपन या विकृतचित्त के विषय में एक युक्तियुक्त संदेह से कहीं अधिक है। अतः संदेह का लाभ अभियुक्त को मिलना चाहिए। इन परिस्थितियों में, आक्षेपित निर्णय को यथावत नहीं रखा जा सकता एवं इसे अपास्त किया जाता है।

24. इस न्यायालय के हालिया निर्णय प्रकाश नई उर्फ सेन विरुद्ध गोवा राज्य, (2023) 5 एससीसी 673 में, उपरोक्त सिद्धांतों को दोहराते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय 25 में निर्धारित प्रक्रिया स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि विकृत चित्त के आधार पर तब तक दोषमुक्त नहीं किया जा सकता जब तक कि कार्य वास्तव में न किया गया हो। इसका पूरा हेतुक विकृत चित्त व्यक्ति को विचारण का सामना करने में सुविधा प्रदान करना है, न केवल उसकी तार्किक क्षमता के कारण, बल्कि उसे एक निःशक्त व्यक्ति के रूप में भी मानना है। न्यायालय की भूमिका उपचारात्मक उपाय ढूंढना और पूर्ण न्याय करना है। इस न्यायालय ने कण्डिका 17 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:



“17. दण्ड प्रक्रिया संहिता के अध्याय 25 के क्षेत्र व परिधि का उल्लेख करते हुए, जिसमें वर्ष 2009 में संशोधनों द्वारा शामिल किए गए प्रावधान भी शामिल हैं, हमें इस तथ्य को विचार में रखना होगा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के अधीन प्रकरण पर विचार करते समय न्यायालय की एक बड़ी भूमिका होती है। यदि विचारण के दौरान एक मैत्रीपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है, जब न्यायालय को किसी अभियुक्त को विकृतचित्त होने के आधार पर भी दोषमुक्त करने की पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान की गई हैं, तो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84 के मामले में भी यही तर्क इतनी ही शक्ति से लागू करना होगा।”

25. वर्तमान प्रकरण में, मार्ग सूचना में स्पष्ट रूप से अपीलार्थी को मानसिक रोगी बताए जाने के बावजूद, उपचार करने वाले मनोचिकित्सक से कोई प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं किया गया। विचारण न्यायालय ने केवल दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 328 (जो विचारण का सामना करने की क्षमता का आकलन करती है) के अधीन की गई जाँच रिपोर्ट का अवलंब लिया, न कि कार्य के समय की मानसिक अवस्था पर, जो कि भारतीय नागरिक संहिता की धारा 22 के अधीन विधिक रूप से सुसंगत विचारणीय है। विधिक पागलपन साबित करने का भार नियमित दण्डिक विचारण जितना अधिक नहीं है; यह पर्याप्त है युक्तियुक्त संदेह उत्पन्न करने के लिए, और एक बार जब प्रथम दृष्टया साक्ष्य अभिवचन का समर्थन करती है, तो उसे खारिज करने का भार अभियोजन पर आ जाता है।

26. इसके अतिरिक्त, यह विचार में रखना महत्वपूर्ण है कि अपीलार्थी द्वारा अपने पिता (डी1) और दादी (डी2) की हत्या कारित करने का कोई ज्ञात या सिद्ध हेतुक नहीं था। अभियोजन ने किसी पूर्व शत्रुता, विवाद या उकसावे की ओर संकेत नहीं किया है। इसके विपरीत, अपीलार्थी अपने परिवार की देखरेख में था, और वे उसके मानसिक उपचार में सक्रिय रूप से गहन रुचि और स्नेह दिखा रहे थे, जो कि अ.सा.2- श्रीमती रेखा वर्मा (शिकायतकर्ता) के कथन से स्पष्ट है कि घटना के दिन ही, अभियुक्त का उपचार कराने के बाद, उसके पिता (डी1) उसे घर वापस ले आए थे और उसे एक कमरे में बंद कर दिया था। परिवार के करीबी सदस्यों पर अचानक, बिना उकसावे के और क्रूर हमले की प्रकृति, अपीलार्थी द्वारा किए गए "मैं हनुमानजी, बजरंग बली, दुर्गा हूँ" जैसे कथनों और उसके अनियमित व्यवहार के साथ, एक मनोविकृति प्रकरण के लक्षणों से मेल खाते हैं जो आमतौर पर भ्रम या मतिभ्रम से जुड़े मानसिक विकार के प्रकरणों में पाए जाते हैं। इस प्रकार, भारतीय नागरिक संहिता की धारा 22 (भारतीय दण्ड संहिता की धारा 84) के प्रावधान अपीलार्थी के प्रतिरक्षा में आएंगे, क्योंकि उसे यह समक्ष नहीं था कि वह जो कर रहा है वह दोषपूर्ण है या वह विधि के प्रतिकूल है। इसे ज्ञात करने हेतु, अनिवार्य परिस्थितियों और अपराध की पूर्ववर्ती, मौजूदा और अनुवर्ती व्यवहार को मुख्य रूप से विचार



में रखा जाना चाहिए। अतः, भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि संधारणीय नहीं रह सकती।

27. हेतुक का अभाव, विशेष रूप से निकट संबंधियों से जुड़े प्रकरणों में, इस अनुमान को और पुष्ट करता है कि कृत्य तर्कसंगत आशय से प्रेरित नहीं था, बल्कि एक विक्षिप्त मानसिक अवस्था के कारण था। विधिक पागलपन के अभिवचन का मूल्यांकन करते समय न्यायालयों द्वारा इस कारक को लगातार सुसंगत माना गया है।

28. उपरोक्त सिद्धांत देवीदास लोका राठौड़ विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य और रतन लाल विरुद्ध मध्य प्रदेश राज्य (2018) 7 एससीसी 718 में दोहराया गया है। सुरेंद्र मिश्रा (पूर्वोक्त) और बापू (पूर्वोक्त) में, और माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जो अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 84 के अधीन किसी कृत्य के दायित्व से मुक्ति चाहता है, उसे विधिक पागलपन साबित करना होगा, न कि चिकित्सीय पागलपन। चूंकि पागलपन या विकृतचित्त शब्द को दंड संहिता में परिभाषित नहीं किया गया है, इसलिए यह अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग अर्थ रखता है और मानसिक विकार की अलग-अलग अवस्था का वर्णन करता है। विधिक पागलपन और चिकित्सीय पागलपन के मध्य अंतर किया जाना चाहिए। न्यायालय का संबंध विधिक पागलपन से है, न कि चिकित्सीय पागलपन से।

29. इसलिए, वर्तमान प्रकरण में, यह न्यायालय पाता है कि अपीलार्थी की मानसिक अवस्था के संदर्भ में परिवार के सदस्यों और साक्षियों का संगत अभिसाक्ष्य; अपने पिता और दादी की हत्या कारित करने के किसी हेतुक का अभाव; अभियोजन द्वारा पागलपन के अभिवचन को दोषपूर्ण साबित करने या उसकी उचित विवेचना करने में असफलता; और घटना के दौरान अपीलार्थी द्वारा प्रदर्शित व्यवहार, ये सभी मिलकर विधिक पागलपन की एक मजबूत धारणा बनाते हैं, जिसके लिए भारतीय नागरिक संहिता, 2023 की धारा 22 के अधीन संरक्षण आवश्यक है।

30. इस प्रकरण के तथ्यों पर उपरोक्त सिद्धांतों को लागू करते हुए, हमारा यह विचार है कि यह अपीलार्थी के पागलपन या विकृतचित्त होने के बारे में एक युक्तियुक्त संदेह से कहीं अधिक का प्रकरण है और इसलिए संदेह का लाभ अभियुक्त को मिलना चाहिए। अभियोजन भी अभियुक्त/अपीलार्थी के अपराध को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में असफल रहा है और अभियोजन ने स्वयं अपने साक्ष्यों के आधार पर इस सिद्धांत को नकार दिया है। अतः भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 323 के अधीन दोषसिद्धि अपास्त किए जाने योग्य है।



31. उपरोक्त कारणों से, अपीलार्थी **महेश कुमार वर्मा** की ओर से प्रस्तुत दाण्डिक अपील स्वीकार की जाती है और भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 323 के अधीन उसके दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को अपास्त किया जाता है। अभियुक्त/अपीलार्थी को उसके विरुद्ध विरचित उक्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। वह जेल में निरुद्ध है। यदि किसी अन्य दाण्डिक प्रकरण में उसकी आवश्यकता न हो, तो उसे अविलंब रिहा किया जाए।

32. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 437-क के प्रावधानों को विचार में रखते हुए, अभियुक्त-अपीलार्थी को निर्देशित किया जाता है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता में निर्धारित प्रपत्र क्रमांक 45 के अनुसार 25,000/- रुपये की राशि का व्यक्तिगत बंधपत्र संबंधित न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करें, जो छह माह की अवधि तक प्रभावशील होगी साथ ही यह वचन भी दें कि वर्तमान निर्णय के विरुद्ध या अनुमति प्रदान करने हेतु विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत करने की स्थिति में, उपरोक्त अपीलार्थी इसकी सूचना प्राप्त होने पर माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष उपस्थित होगा।

33. इस निर्णय की प्रमाणित प्रतिलिपि मूल अभिलेख सहित विचारण न्यायालय को सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्रवाई हेतु अविलंब प्रेषित की जाए।

34. निर्णय से विदा लेने से पूर्व, हम इस प्रकरण में *न्यायमित्र* के रूप में उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अभिषेक सिन्हा के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना उचित समझते हैं। हम न्याय के लिए उनकी पेशेवर सेवा और सराहनीय योगदान के लिए अपना आभार व्यक्त करते हैं।

सही/-
(बिभु दत्त गुरु)
न्यायाधीश

सही/-
(रमेश सिन्हा)
मुख्य न्यायाधिपति

(Translation has been डीone through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

